☆ लन्दन में गोखले–गाँधी वार्ता

गाँधी जी की आत्मकथा में रहस्यपूर्ण मौन का अर्थ

दया प्रकाश सिन्हा
आई.ए.एस. (अवकाश प्राप्त)

गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है – 'सन् 1914 में सत्याग्रह–संग्राम का अन्त होने पर गोखले की इच्छा से मुझे लंदन होकर देश जाना था।' *(सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा, म.क. गाँधी, सस्ता साहित्य भंडार प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ–393)* यह भी निश्चित हुआ था कि लंदन में कांग्रेस के नरम दल के नेता गोपाल कृष्ण गोखले उनसे मिलेंगे।

गाँधी जी ने पाठकों को यह नहीं बताया कि गोखले ने उनसे *'लन्दन होकर'* वापस भारत आने को क्यों कहा ? दक्षिण अफ्रीका से भारत आने के लिए सीधा मार्ग है। यदि किसी व्यक्ति को अन्ततः भारत पहुंचाना है, तो वह तब तक अफ्रीका से लन्दन नहीं जाएगा, जब तक कोई विशेष कारण न हो। गांधी जी ने अपनी आत्मकथा में उस विशेष कारण का उल्लेख नहीं किया जिससे गोखले ने उनसे भारत जाते समय लन्दन जाने की बात कही। यदि गोखले को गाँधी जी से भेंट और बातचीच ही करनी होती, तो वह गाँधी जी के भारत पहुंचने पर भी ऐसा कर सकते थे। फिर ऐसी क्या बात थी कि उन्होंने गाँधी जी को भारत वापस लौटने के पूर्व उनसे लन्दन में मिलने के लिए इतना लम्बा और घुमावदार रास्ता अपनाने को कहा ? आत्मकथा में इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दिया गया है। इसीलिए यदि किसी एक निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है, तो वह यही है कि गोखले किसी अन्य तीसरे व्यक्ति के साथ गांधी जी से भेंट करना चाहते थे, जो लन्दन में ही उपलब्ध था। यह तीसरा व्यक्ति कौन हो सकता था ?

सामान्यतया कोई व्यक्ति अपना व्यापार या व्यवस्था किसी अन्य व्यक्ति के कहने पर बंद नहीं करता है। कोई भी किसी नई, अनजान जगह पर, विशेष रूप से, जब कि उसे बड़े परिवार का भरण–पोषण करना हो, नई स्थापना शुरू करने पर आश्वस्त नहीं हो सकता है। इस तरह का जोखिम भरा काम तभी संभव है जब कोई व्यक्ति युवा हो और उस पर परिवार की ज़िम्मेदारियां न हों। गांधी जी को न केवल एक बड़े परिवार का निर्वाह करना था (उनके चार पुत्र थे), बल्कि उन्हें दर्जनों सत्याग्रहियों का भी भरण–पोषण करना था, जिन्हें दक्षिण अफ्रीका में उनके 'फीनिक्स' आश्रम में प्रशिक्षित किया जा रहा था। यद्यपि गांधी जी ने इस बारे में बहुत कुछ नहीं लिखा, परन्तु आत्मकथा में स्पष्ट संकेत मिलते हैं कि गोखले ने उनके परिवार के और आश्रम वासियों के भरण–पोषण में पूर्ण आर्थिक सहायता देने का आश्वासन दिया था। यह भी हक़ीकत है कि केवल गांधी जी के परिवार को ही नहीं बल्कि फीनिक्स आश्रमवासियों को भी भारत यात्रा के लिए टिकट दिए गये थे और उन्हें अन्तिम रूप से अहमदाबाद में एक आश्रम में बसाने से पहले गुरूकुल कांगड़ी (हरिद्वार) में और बाद में शान्ति निकेतन में रखा गया था।

इस प्रकार गांधी जी स्वयं अपनी इच्छा से नहीं, अपितु गोखले के निर्देश पर भारत लौटे। ऐसा केवल गोखले की आर्थिक सहायता से संभव हो सकता था। क्या गोखले के पास गांधी जी के परिवार तथा 'आश्रमवासियों की इतनी बड़ी संख्या के लोगों की यात्रा का खर्चा वहन करने और उनकी मदद करने के लिए पर्याप्त धन था ? यदि नहीं, तो फिर गोखले की पीठ पर वह कौन व्यक्ति था, जिसके पास खर्चा करने के लिए विपुल भण्डार था ?

दक्षिण अफ्रीका से गांधी जी की वापसी में गोखले का क्या हित था ? उनको इससे क्या लाभ मिला या मिलने की संभावना हो सकती थी ? यदि गांधी जी की वापसी से गोखले को व्यक्तिगत रूप से या उनकी सर्वेंट ऑफ इण्डिया सोसायटी को लाभ नहीं हो रहा था तो किसको इससे लाभ हो सकता था ? क्या गोखले ने किसी तीसरे व्यक्ति की ओर से गांधी जी को भारत वापसी के लिए कहा था ?

आत्मकथा में लिखा है कि गांधी जी गोखले से मिलने के लिए समुद्री मार्ग से अपनी पत्नी कस्तूरबा तथा यहूदी मित्र कैलेनबैक के साथ लन्दन के लिए रवाना हुए। उनकी टिकटें तृतीय श्रेणी की थीं, फिर भी उन्हें विशेष सुविधाएं प्रदान की गईं, जो तृतीय श्रेणी के यात्री को नहीं दी जाती थीं। उन पर विशेष अनुकम्पा करते हुए उन्हें 'फलाहार' दिया गया, जिसमें केवल फल और मेंवों का भोजन था।

गांधी जी लिखते हैं – *''जहाज़ के तीसरे दर्जे में जगह मुनासिव थी, और सफाई माकूल रखी जाती थी। कोई हमें तंग न करे इस ख्याल से एक पाखाने पर ताला लगाकर कुंजी हमें सौंप दी गई थी। और हम तीनों के फलाहारी होने की वजह से हमें सूखे मेवे और ताज़ा फल भी देने की आज्ञा स्टीमर के खजांची को दी गई थी। साधारणतः तीसरे दर्ज़े के मुसाफिरों को फल कम ही मिलते हैं। सूखा मेवा बिल्कुल नहीं मिलता। इन सुभीतों की वजह से हमने समुद्र में अठारह दिन बड़ी शांति से बिताए।''*

(आत्मकथा–पृष्ठ–323)

इस स्टीमशिप कम्पनी ने विशेष सुविधाएं क्यों दी ? कौन था, जिसने गांधी जी और उनकी पार्टी को फल और बादाम आदि देने का आदेश दिया ? किसने गांधी जी के साथ वी.आई.पी की तरह का व्यवहार करने के लिए स्टीमशिप कम्पनी को प्रभावित किया ? निश्चय ही, एक विदेशी स्टीमशिप कम्पनी पर गोखले का इतना प्रभाव नहीं हो सकता था। तो फिर कौन गोखले का मुखौटा लगा कर इस सबके पीछे था ?

गांधी जी ने आत्मकथा में अपने लन्दन प्रवास के बारे में 14 पृष्ठ लिखे है। गोखले ने लन्दन में गांधी जी से मिलने के लिए क्यों कहा, इसका सही कारण छुपाने के लिए बड़ी चतुराई बरती गई है। उन्होंने बड़े विस्तार से महत्वहीन मामलों और व्यक्तियों तथा अहिंसा की अवधारणा पर अपने भावों को तो लिखा, 'परन्तु इस मुख्य मुद्दे पर एक शब्द भी नहीं लिखा। गोखले ने उनसे *'लन्दन होकर'* भारत वापस लौटने को क्यों कहा ?

प्रथम विश्व युद्ध छिड़ जाने के कारण गोखले को पेरिस में रुक जाना पड़ा और कुछ समय बाद ही लन्दन पहुंच पाए। लन्दन में गोखले के पहुंचने के बाद गांधी जी

हमें बताते हैं कि *"उनके (गोखले के) पास मैं और केलैनबैक जाया करते थे। बहुत करके केवल लड़ाई की चर्चा होती।"* क्या बातचीत केवल 'युद्ध के बारे में' होती थी ? गांधी जी ने इस बारे में अपनी आत्मकथा के पाठकों को अंधेरे में रखा है। उन्होंने लन्दन में रहने के वास्तविक उद्देश्य के रहस्य को नहीं खोला। अफसोस अपनी आत्मकथा में उन्होंने सच्चाई उद्घाटित नहीं की।

भाषा किसी व्यक्ति के विचारों को व्यक्त करती हैं, परन्तु गांधी जी ने एक मंजे हुए कूटनीतिक की भांति इसका उपयोग सत्य को छुपाने के लिए किया। सम्पूर्ण 14 पृष्ठों में शब्दों की भरमार है। लन्दन में उनके मूल उद्देश्य से पाठकों का ध्यान हटाने के लिए शब्दों का सहारा लिया गया है। कुशाग्र बुद्धि वाले पाठक सच्चाई का अनुमान लगा सकते हैं।

आत्मकथा में अध्याय 38 में गांधी जी लिखते हैं – *"विलायत पहुंचे तो पता चला गोखले तो पेरिस में फंस गए हैं। पेरिस से आवागमन का संबंध टूट गया है और यह पता नहीं कि वह कब आयेंगे। गोखले स्वास्थ्य सुधार के लिए पेरिस गए थे, जहां लड़ाई की वजह से अटक गए।"*

(आत्मकथा–पृष्ठ–325)

इस प्रकार पेरिस से उनके (गोखले के) आगमन की प्रतीक्षा करने के दौरान गांधी जी ने लन्दन में रह रहे हिन्दुस्तानियों की एक बैठक की और उनके सामने अपने विचार रखे। गांधी जी के विचार क्या थे ? आइए, हम स्वयं गांधी जी के विचारों को सुनें–

> *"मेरे मन ने कहा कि विलायत में रहने वाले हिन्दुस्तानियों को लड़ाई में अपना हिस्सा देना चाहिए। अंग्रेज विद्यार्थी लड़ाई में सेवा करने का अपना निश्चय प्रकट कर चुके थे। हिन्दुस्तानी उसमें पीछे क्यों रहें ? इन दलीलों के खिलाफ सभा में बहुत सी दलीलें दी गई। हमारी और अंग्रेज की स्थिति में गुलाम इच्छा से मालिक की कैसे मदद कर सकता है ? गुलामी से छुटकारा पाने के इच्छुक गुलाम का क्या यह कर्तव्य नहीं है कि वह मालिक की विपत्ति का उपयोग अपनी मुक्ति के लिए करें, यह दलील उस समय मेरे गले कैसे उतरती ? मैं दोनों की स्थिति का भेद समझता था, पर मुझे अपनी दशा शुद्ध गुलामी की नहीं लगती थी। मुझे तो यह जान पड़ता था कि अंग्रेजी राज्य पद्धति में जो दोष है, उसकी अपेक्षा अंग्रेजी अधिकारियों में दोष अधिक हैं। वह दोष हम प्रेम से दूर कर सकते हैं। अगर अंग्रेजों द्वारा और उनकी मदद से हम अपनी अपनी स्थिति सुधारना चाहते हैं तो हमें उनकी विपत्ति में उनकी मदद करके अपनी दशा सुधारनी चाहिए। राज्य पद्धति सदोष होने पर भी, जैसे वह आज मुझे असह्य लगती है, वह उस समय नहीं लगती थी.. उन्होंने यह वक़्त प्रजा की मांग पेश करने का अवसर नहीं माना। मैं अपनी सलाह पर अड़ा रहा और सूचित किया कि जिन्हें भरती में नाम लिखवाना हो वह लिखाएं। नाम अच्छी तादाद में आए। उसमें प्रायः सभी प्रान्तों और सब धर्मों के*

लोगों के नाम थे।
(आत्मकथा–पृष्ठ–325–326)

इस प्रकार 1915 में हम देखते हैं कि एक 46 वर्षीय अंग्रेज़ के वफ़ादार गांधी ने इस बात पर विश्वास नहीं किया कि भारतीय मात्र गुलाम बन कर रह गए हैं। 1924–25 में अपनी आत्मकथा लिखते हुए गांधी जी ने अपने उपनिवेशवादी आकाओं की सेवा करने के अपने निर्णय को उचित ठहराने की कोशिश की। ***"युद्ध में शामिल होना अहिंसा के साथ मेल नहीं खाता, यह मैं साफ देख रहा था, पर कर्तव्य का बोध सदा दीपक के प्रकाश की भांति स्पष्ट नहीं होता। सत्य के पुजारी को बहुत बार गोते खाने पड़ते हैं।***

आत्मकथा–पृष्ठ–327)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि दक्षिण अफ्रीका से भारत वापस आते समय, 1915 में अंग्रेज के प्रति 'जी हजूरी' गांधी जी के व्यक्तित्व की विशिष्टता थी।

अपनी आत्मकथा के मात्र दो पृष्ठों (अध्याय–41) में गांधी जी ने अपने लन्दन आगमन के बाद अपने और गोखले के बीच हुई बातचीत का वर्णन किया है । इसमें गांधी जी लिखते हैं कि वह बीमार पड़ गए थे और डॉ. जीवराज मेहता ने उनसे दूध पीने के लिए कहा था, परन्तु वह दूध न पीने की हठ पर डटे रहे। गोखले ने भी दूध पीने के लिए उन पर दबाव नहीं डाला। इसके कुछ दिन बाद गांधी जी भारत लौट आए।

इस प्रकार गांधी जी चाहते हैं कि हम इस बात पर विश्वास कर लें कि लन्दन में इकट्ठे रहते हुए गांधी जी और गोखले में चर्चा के दौरान केवल युद्ध तथा गांधी जी के आहार को छोड़कर अन्य किसी महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा नहीं हुई । यदि किसी महत्वपूर्ण बात पर चर्चा करने के लिए कोई विषय था ही नहीं तो ये दोनों नेता लन्दन गए ही क्यों? गांधी जी ने अपनी लन्दन यात्रा के बारे में जो लिखा है, उसमें सच्चाई और विश्वसनीयता नहीं दिखाई पड़ती।

इन दो नेताओं के लन्दन जाने का प्रायोजन क्या हो सकता था ? चूँकि गांधी जी और गोखले ने इसका उत्तर जानने के लिए कोई स्पष्ट संकेत नहीं छोड़ा है, इसलिए हमें परिस्थिति–साक्ष्य, के लिए इधर–उधर बिखरे कुछ वक्तव्यों को देखना होगा और सच्चाई के स्वयंभू पोषक द्वारा छुपाये गए सच को झलक प्राप्त करने के लिए इनमें से निष्कर्ष निकालना होगा।

दक्षिण अफ्रीका में 1914 का सत्याग्रह

गांधी जी लिखते हैं – ***"सन् 1914 में सत्याग्रह संग्राम का अन्त होने पर गोखले की इच्छा से मुझे इंगलैण्ड होकर देश जाना था"।***

1914 में सत्याग्रह संग्राम क्या था? इससे क्या प्राप्त किया जा सका?

दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने 1914 में दक्षिण अफ्रीका में बसे भारतीयों के हालात और शिकायतों पर ध्यान देने कि लिए तीन सदस्यों के एक आयोग की घोषणा की थी।

गांधी जी ने मांग की थी कि आयोग के सदस्यों में एक भारतीय होना चाहिए। जब अंग्रेजो ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया तो गांधी जी ने 1 जनवरी, 1914 को सत्याग्रह शुरू करने की घोषणा कर दी। इस तारीख के कुछ दिन पहले साउथ–अफ्रीका की रेलरोड कम्पनी के गोरे कर्मचारी अपनी मांगों को मनवाने के लिए हड़ताल पर चले गए और उन्होंने गुन्डागर्दी मचाई। सरकारी और रेलरोड कम्पनी की संपत्तियों को उन्होंने नष्ट किया। जब गांधी जी ने हड़ताल और हिंसा की बात सुनी तो उन्होंने तुरन्त ही सत्याग्रह आन्दोलन बंद करते हुए घोषणा कर दी कि यदि शत्रु मुश्किल में पड़ जाता है, तो सत्याग्रही इसका लाभ नहीं उठाता है। इस प्रकार कथित 1914 का सत्याग्रह, जिसे गांधी जी ने बहुत बढ़ा–चढ़ाकर ''संग्राम'' का नाम दिया था, वस्तुतः कोई आन्दोलन था ही नहीं; यह मात्र एक विफल इरादा था। परन्तु इससे अंग्रेज आका बड़े प्रसन्न हुए। ब्रिटिश सैक्रेटरी ऑफ स्टेट ने तार भेज कर गांधी जी को बधाई दी। इस प्रकार गांधी जी दक्षिण अफ्रीका सरकार के विशेष प्रिय बन गए, क्योकि जिस तरह उन्होंने ब्रिटिश हित की रक्षा की थी, वैसी उनके पहले किसी भारतीय ने नहीं की थी।

गोपाल कृष्ण गोखले

यह विख्यात है कि तिलक के विपरीत गोपाल कृष्ण गोखले एक समझौतावादी व्यक्ति थे, जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नरम दल का नेतृत्व किया था। सूरत कांग्रेस के अधिवेशन (1907) में नरम दल तथा गरम दल के बीच टकराव हो गया। दोनों समूहों के बीच 'अच्छे–खासे घूंसे–मुक्के चले। अंग्रेज ने तय किया कि कांग्रेस को गरम दल के पंजे से मुक्त कराया जाए। गरम दल के तिलक और लाला लाजपत राय को गिरफ्तार किया और जेल में डाल दिया। इस तरह कांग्रेस पर नरम दल के कब्जे के लिए रास्ता खोल दिया गया।

अंग्रेज़ ने षड़यंत्र रचकर अपने चहेते गोखले को कांग्रेस का नेता नियुक्त करवा दिया। परन्तु 1914 तक उनका स्वास्थ्य गिरना शुरू हो गया था। अंग्रेज भरसक कोशिश में थे कि उनके बाद उनका जैसा ही समझौतावादी उत्तराधिकारी कांग्रेस की गद्दी पर बैठाया जाए। उनकी नजर दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी पर पड़ी, जिन्होंने ''ब्रिटिश क्राउन'' के प्रति निष्ठा की शपथ ली थी, जिन्होंने बोएर युद्ध और जुलू युद्ध में उनकी मदद की और जो सदैव ब्रिटिश सरकार की शह पर दक्षिण अफ्रीका में अपने सत्याग्रहों को वापस लेने को तत्पर रहते थे। जब गांधी जी ने रेल–सड़क हड़ताल होने पर सरकार के दिक्कत मे पड़ने पर लाभ उठाने से इन्कार कर दिया तो ब्रिटिश सरकार ने उनका बड़ा गुणगान किया। इस आधार पर तत्कालीन घटनाक्रम की रचना करना आसान हो जाता है।

अंग्रेज ने गोखले से कहा कि वे गांधी जी से अपना बोरा–बिस्तरा लेकर भारत लौट आने को कहें। गोखले ने अंग्रेज की ओर से गांधी जी से वायदा किया कि उनकी यात्रा का समूचा व्यय उन्हें मिल जाएगा और भारत में उनकें परिवार, आश्रमवासियों आदि की देख–रेख भी की जाएगी। साथ ही ये भी कहा कि गांधी जी स्वयं भारत वापस आने के पूर्व उनसे (गोखले से) लन्दन में मिलें। ब्रिटिश सरकार के आदेश पर स्टीमशिप कम्पनी ने गांधी जी को विशेष अतिथि–सत्कार प्रदान किया, जो तीसरे दर्जे के अन्य यात्रियों को नहीं

दिया जाता था। ब्रिटिश सरकार ने ही गोखले से कहा होगा कि वह गांधी जी साथ उनसे लन्दन में मिलें। तदनुसार, गांधी जी और गोखले दोनों लन्दन पहुँचे। गांधी जी ने अपनी आत्मकथा में नहीं लिखा है कि उन दोनों में लन्दन में क्या किया, और वे दोनों किस तीसरे से मिले। किन्तु उस तीसरे व्यक्ति का अनुमान लगाना कठिन नहीं है। स्पष्ट ही वह तीसरा व्यक्ति ब्रिटिश सरकार का प्रतिनिधि रहा होगा। गांधी जी ने उससे अपनी ब्रिटिश सरकार के प्रति अपनी निष्ठा, और अहिंसा में अपना अटल विश्वास प्रकट किया होगा। और ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि ने गांधी जी को आश्वस्त किया होगा कि उनको अहिंसा के प्रचार के लिए खुली छूट दी जाएगी।

लन्दन यात्रा के बाद गोखले ने गांधी जी के साथ जिस तरह का व्यवहार किया, उससे उपर्युक्त निष्कर्ष की पुष्टि होती है। जैसे ही वह भारत पहुंचे, गोखले ने बम्बई मे उनके भव्य स्वागत की व्यवस्था की। वहां अनेक अभिन्दन समारोह भी हुए। गांधी जी ने श्री जहांगीर पेटिट के महल के चकाचौंध कर देने वाले शानदार वातावरण में पूरी भव्यता के साथ अपने सम्मान में दिए गए समारोह का उल्लेख भी किया है। उन्होंने एक और समारोह का भी जिक्र किया है, जिसका आयोजन बम्बई के गुजराती समुदाय ने किया था। स्पष्ट ही इन स्वागत समारोह के पीछे ब्रिटिश सरकार की प्रच्छन्न भूमिका थी। ब्रिटिश इन समारोहों के माध्यम से गांधी जी का भारत में नेतृत्व प्रतिष्ठि कर रहे थे।

गोखले ने ब्रिटिश सरकार और गांधी जी के बीच बिचौलिए का काम किया। गोखले के माध्यम से बम्बई के गर्वनर लार्ड विलिंगटन ने गांधी जी को संदेश भेजा कि वह उनसे मिलना चाहते हैं। सामान्यतया गर्वनर ऐरे–गैरे व्यक्तियों से नहीं मिलते थे, विशेष रूप से ऐसे व्यक्ति से जो एक दूर–दराज़ बसी ब्रिटिश कॉलोनी का छोटा सा वकील हो, जिससे मिलने का काई 'विशेष' कारण न हो। जैसा कि परिस्थितियों से निष्कर्ष निकलता है, गांधी जी और ब्रिटिश सरकार के बीच हुआ समझौता स्पष्ट ही वह कारण था। गांधी जी की आत्मकथा में उनकी बातचीत के दिए गए नमूनों से इस प्रकार का अर्थ निकालने की और भी पुष्टि हो जाती है :–

''मेंरे बंबई पहुंचते ही गोखले ने मुझे ख़बर दी– ''गर्वनर तुमसे मिलना चाहते हैं और अच्छा हो कि पूना आने के पहले तुम उनसे मिलते जाओ'। अतः मैं उनसे मिलने गया। साधारण बातें करने के बाद उन्होंने कहा – 'आपसे मैं एक वचन मांगता हूँ। मैं यह चाहता हूँ कि सरकार के बारे में आपको कुछ करना हो तो उसके पहले आप मुझसे मिल लें और बातें कर लें।''

मैंने जवाब दिया – ''यह वचन देना मेरे लिए बहुत आसान है, क्योंकि सत्याग्रही की हैसियत से मेरा यह नियम ही है कि किसी के खिलाफ कोई कदम उठाना हो तो पहले उसका दृष्टिबिंदु उसी से समझ लूं, और उसके जितना अनुकूल होना संभव हो उतना हो जाऊं। दक्षिण अफ्रीका में इस नियम का मैंने सदा पालन किया है, और यहां भी वैसा ही पालन करने वाला हूँ''।

लार्ड विलिगंडन ने धन्यवाद दिया और कहा– ''जब मिलना हो तब आप क्या मुझसे तुरंत मिल सकेंगे और आप देखेंगे कि सरकार जान–बूझकर कोई बुरी बात करना नहीं चाहती'।

मैंने जवाब दिया – ''यही विश्वास तो मेरा सहारा है।''

(आत्मकथा, पृष्ठ–348–349)

क्या घनिष्ठता थी! क्या सहमति थी! विचारों में कितना साम्य था! गांधी जी को विश्वास था कि अंग्रेज कभी कुछ गलत नहीं करेंगे। गांधी जी के लिए अंग्रेजो ने भारत पर आधिपत्य जमाकर और उसे गुलामी में जकड़ कर कुछ गलत नहीं किया था।

गांधी जी अपने आका के निर्देश पर बम्बई से पूना गए। वहां गोखले ने उनसे कहा *– ''आपको (अपने) आश्रम के लिए पैसा मुझसे ही लेना है। उसे मैं अपना ही आश्रम मानूंगा।''* *(आत्मकथा, पृष्ठ–348–349)*

गांधी जी ने अपनी आत्मकथा में यह रहस्योद्घाटन भी किया है कि गोखले ने अपने एकाउन्टेण्ट को निर्देश दिया था कि सर्वेंट ऑफ इंडिया सोसायटी के खातों में गांधी जी का एक खाता खोला जाए और उनके *''आश्रम तथा सार्वजनिक व्यय''* के लिए जितने धन की आवश्यकता हो, दे दिया जाए। इस प्रकार गोखले ने एक प्रकार से उन्हें कुबेर का खजाना सौंप दिया। गोखले न तो उद्योगपति थे, न ही व्यापारी थे। न ही वह विरासत से बहुत अमीर आदमी थे, तो उन्हें गांधी जी के लिए इतना धन कहां से मिला ? इसका उत्तर स्पष्ट है। अंग्रेज आकाओं से। इस प्रकार गांधी जी को अंग्रेजों ने भारत का नेता बनाया और हर प्रकार से आर्थिक संसाधन उनके लिए उपलब्ध करवाए।

गांधी जी ने भी अंग्रेजों की कृपा लौटाई। 1915 से 1918 तक उन्होंने अपनी अहिंसा के सिद्धान्त की परवाह न करते हुए ब्रिटिश फौज के लिए भारतीयों की भर्ती करने में अथक काम किया।

बहुचर्चित ख़िलाफत आन्दोलन (1920–21) का उद्देश्य टर्की के सुल्तान, जिसे मुसलमान अपना ख़लीफा मानते थे, की सत्ता को बहाल करना था। इसका भारत की स्वतंत्रता से कोई लेना देना नहीं था। इसने क्रांतिकारियों के स्वतंत्रता आन्दोल को भटकाने का ही काम किया। फिर अगले दस वर्षों तक अंग्रेज़ों को देश से बाहर निकाल फेंकने के लिए गांधी जी ने कोई जनान्दोलन शुरू नहीं किया। उनकी इस कृपा से अंग्रेजों को राहत की सांस लेने का समय मिल गया।

इसी प्रकार नागरिक अवज्ञा आन्दोलन और नमक सत्याग्रह (1930–31) का उद्देश्य भी अंग्रेज़ों को भारत की धरती से निकालने का नहीं था। इन आन्दोलन का उद्देश्य भी नमक पर कर समाप्त करने तक सीमित रह गया, जिसका सरकार के कुल राजस्व संग्रह में नाम–मात्र का भी महत्व नहीं था।

'भारत छोड़ो' आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन है जिसे कांग्रेसियों और अनपढ़ मध्यम वर्ग के लोगों ने बड़े उत्साह से गांधीवादी आन्दोलन कहा है। यह भी प्रचार है कि यह आन्दोलन विदेशियों के चन्गुल से छुटकारा पाने का आन्दोलन था। परन्तु तथ्य कुछ और ही बताते हैं।

1942 के आन्दोलन की शुरुआत कभी भी गांधी जी ने या कांग्रेस पार्टी ने नहीं की थी। गांधी जी ने कांग्रेस पार्टी के बम्बई अधिवेशन में 8 अगस्त, 1942 को इस आन्दोलन को शुरु करने का केवल इरादा भर जताया था। उन्होंने कहा था–

"मैं आपके प्रस्ताव (भारत छोड़ो प्रस्ताव) के लिए बधाई देता हूँ, जो आपने अभी पारित किया..... ये याद रहे कि वास्तविक लड़ाई अभी शुरु नहीं हो रही है। आपने सारी शक्ति मुझे सौंप दी है। अब मैं वाइसराय के पास जाऊँगा, और उनसे कांग्रेस की मांग स्वीकार करने के लिए आग्रह करूँगा। इसमें दो तीन हफ्ते लग सकते हैं। तब तक आप क्या करेंगे ? मुझे सबसे पहले चरखा ध्यान आता है।

(कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी : खंड 76)

इस प्रकार गांधी जी ने *'करो या मरो'* जैसे बहादुरी के शब्दों के बावजूद आन्दोलन शुरु करने की तारीख दो या तीन सप्ताह के लिए स्थगित कर दी थी। क्या कारण था ? क्या वाइसराय से अनुनय–विनय करना था ? वाइसराय जी, कृपा करो, कृपया भारत छोड़ दो ? क्या गांधी जी इतने ही सीधे थे, जितने दिखाई पड़ते थे ? या फिर उनका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि जब आन्दोलन आरंभ हो तो दो–तीन सप्ताहों के अन्तराल में आन्दोलन को कुचल देने के लिए सरकार पर्याप्त तैयारियां कर लें ? चाहे बात जो भी हो, इस तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं है कि गांधी जी और कांग्रेस पार्टी ने कभी भी 1942 का आन्दोलन शुरु नहीं किया। गांधी जी सहित सभी कांग्रेसी नेता 9 अगस्त, 1942 को भोर के समय गिरफ्तार कर लिए गए थे। शक्तिशाली और प्रचंड आन्दोलन का नेतृत्व उन युवा भारतीयों ने किया, जो अंग्रेज़ी शासन की दासता को और सहन करने को तैयार नहीं थे और न ही वे कांग्रेस पार्टी के दोगली बातों और अधमने नारों को सहन करने के लिए तैयार थे।

इस प्रकार जब यह प्रश्न उठाया जाता है कि क्या गांधी जी या कांग्रेस ने अंग्रेज़ी नके शासन से भारत को मुक्त कराने के लिए कोई आन्दोलन शुरु किया था, तो इसका उत्तर एकदम यही है कि उन्होंने ऐसा कभी नहीं किया।

गांधी जी ने अंग्रेज़ों के शासन को उखाड़ फेंकने के लिए कोई आन्दोलन शुरु नहीं किया था। साथ ही उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया था कि क्रांतिकारियों द्वारा चलाए जा रहे समानान्तर स्वतंत्रता आन्दोलन को बदनाम किया जाए और मिटा दिया जाए। वायसराय लार्ड इर्विन को लिखे अपने 2 मार्च, 1930 के पत्र में, जिसे व्यक्तिगत रूप से एक अंग्रेज़ के माध्यम से लार्ड इर्विन को भेजा था, गांधी जी ने अपनी प्रतिबद्धता प्रकट की थी और कहा था कि वह अपने अहिंसा के सिद्धान्त से क्रांतिकारी आन्दोलन को रोकने के लिए कृत–संकल्प हैं :–

''यह सब जानते हैं कि हिंसक पार्टी (क्रांतिकारी दल) बढ़ रही है और लोकप्रिय हो रही है.... मेरा अनुभव बताता है कि अहिंसा भी अति शक्तिशाली दल हो सकती है। मैं चाहता हूँ कि इस शक्ति (अहिंसा की शक्ति) को, बढ़ते हुए हिंसक दल (क्रांतिकारी दल) के विरुद्ध लगाऊँ''।

उन्होंने वाइसराय को यह पत्र क्यों लिखा था ? क्या उन्होंने अहिंसा के अपने सिद्धान्त से क्रांतिकारी आन्दोलन को समाप्त करने के अपने प्रयासों के बदले शाबाशी लेनी चाही थी ? या फिर वह अपने ब्रिटिश आकाओं को रिपोर्ट कर रहे थे कि वह 1914 में ब्रिटिश सरकार के साथ हुए उस समझौते का निर्वहन कर रहें हैं, जो लन्दन में गोखले की उपस्थिति में किया था।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर स्पष्ट है कि गांधी जी और ब्रिटिश सरकार के बीच एक गुप्त समझौता था। परन्तु मेरे हृदय में कहीं एक कोना है जो इस बात पर विश्वास नहीं करना चाहता है। वर्षों के प्रयास से कांग्रेस ने बड़ी मेहनत से जिस प्रतिमा का निर्माण किया, उसके टूटने से मेरे हृदय पर आघात लगता है। सही या गलत, उसकी पहचान भारत और भारतीयता के साथ होती है। परन्तु मेरे अन्तर्मन की भारतीयता मुझे सच्चाई देखने के लिए झकझोरती है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि गांधी जी के बारे में ज्ञान रखने वाले कोई विद्वान उक्त तथ्यों को अन्यथा सिद्ध करें और बता सकें कि गोखले ने क्यों गांधी जी को *'लन्दन होकर'* दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने को कहा था।

बी–255, सेक्टर–26,
नोएडा–201301
दूरभाष : 95120–2524911
dpsinha50@hotmail.com